"वैरागी"

• दुबिधा न पड़उ - हरि बिन होर न पूजउ - मड़ै मसाण न जाई । त्रिसना राच्च न पर घर जावा - त्रिसना नाम बुझाई । घर भीतर घर गुरू दिखाइआ - सहज रते मन भाई । तू आपे दाना आपे बीना - तू देवह मत साई ।

अर्थः- मैं परमात्मा के बिना किसी और आसरे की तलाश में नहीं पड़ता, मैं प्रभु के बिना किसी और को नहीं पूजता, मैं कहीं समाधियों, शमशानों में भी नहीं जाता । माया की तृष्णा में फंस के मैं परमात्मा के दर

के बिना किसी और घर में नहीं जाता, मेरी मायावी तृष्णा परमात्मा के नाम ने मिटा दी है । गुरु ने मुझे मेरे हृदय में ही परमात्मा का निवास स्थान दिखा दिया है, और अडोल अवस्था में रंगे हुए मेरे मन को वह सहज - अवस्था अच्छी लग रही है। हे मेरे साईं ! ये सब तेरी ही मेहर है तू खुद ही मेरे दिल की जानने वाला है खुद ही पहचानने वाला है, तू खुद ही मुझे अच्छी मति देता है जिस कारण तेरा दर छोड़ के किसी और तरफ नहीं भटकता ।

मन वैराग रतउ बैरागी - सबद मन बेधिआ मेरी माई । अंतर जोत निरंतर वाणी - साचे साहिब सिउ लिव लाई । रहाउ ।

अर्थः- हे मेरी माँ ! मेरा मन गुरु के शब्द में भेदा गया है परोया गया है । शब्द की इनायत से मेरे अंदर परमात्मा से विछुड़ने का अहिसास पैदा हो गया है । वही मनुष्य दरअसल में त्यागी है जिसका मन परमात्मा के बिरह - रंग में रंगा गया है । उस वैरागी के अंदर प्रभु की ज्योति जग पड़ती है, वह एक - रस महिमा की वाणी में मस्त रहता है, सदा कायम रहने वाले मालिक प्रभु के चरणों में उसकी तवज्जो जुड़ी रहती है । रहाउ ।

असंख बैरागी कहह वैराग - सो बैरागी जि खसमे भावे । हिरदे सबद सदा भै रचिआ - गुर की कार कमावे ।

अर्थः- अनेक ही वैरागी वैराग की बातें करते हैं, पर असल वैरागी वह है जो परमात्मा के विरह - रंग में इतना रंगा हुआ है कि वह पति - प्रभु को प्यारा लगने लगता है, वह गुरु के शब्द के द्वारा अपने दिल में परमात्मा की याद को बसाता है और सदा परमात्मा के भय - अदब में मस्त रह के गुरु के द्वारा बताए हुए कार्य करता है ।

आस निरास रहे बैरागी - निज घर ताड़ी लाई । भिखिआ नाम रजे संतोखी - अमृत सहज पीआई ।

अर्थः- वह बैरागी दुनिया की आशाओं से निर्मोह हो के जीवन व्यतीत करता है, वह दुनियावी घर - धाट के अपनत्व को त्याग के उस घर में तवज्जो जोड़े रखता है जो सचमुच उसका अपना ही रहेगा । ऐसे बैरागी गुरु दर से मिली नाम भिक्षा से अघाए रहते हैं, तृप्त रहते हैं, संतुष्ट रहते हैं क्योंकि उनको गुरु ने अडोल आत्मिक अवस्था में टिका के आत्मिक जीवन देने वाला नाम रस पिला दिया है ।

दुबिधा विच वैराग न होवी - जब लग दूजी राई । सभ जग तेरा तू एको दाता - अवर न दूजा भाई । मनमुख जंत दुख सदा निवासी - गुरमुख दे वडिआई । अपर अपार अगम अगोचर - कहणै कीम न पाई । (1-634)

अर्थः- जब तक मन में रत्ती भर भी कोई और झाक है किसी और आसरे की तलाश है तब तक विरह अवस्था पैदा नहीं हो सकती । पर हे प्रभु ! ये विरह की दाति देने वाला एक तू खुद ही है, तेरे बिना कोई और ये दाति देने वाला नहीं है, और ये सारा जगत तेरा अपना ही रचा हुआ है । अपने मन के पीछे चलने वाले मनुष्य सदा दुख में टिके रहते हैं, जो लोग गुरु की शरण पड़ते हैं उनको प्रभु नाम की दाति दे के आदर - सम्मान बख्शता है । उस बेअंत अगम्य पहुँच से परे और अगोचर प्रभु की कीमत जीवों के बयान करने से नहीं बताई जा सकती उसके बराबर का और कोई कहा नहीं जा सकता ।

(पाठी माँ साहिबा)

हक हक हक

(शब्द गुरु प्रत्यक्षता)

ऐक शब्द

उपरोक्त अर्थों में कहे गये गुरू-सतगुरू-शबद-नाम-सच्चा नाम इत्यादि विशेष - विशेषो का केवल और केवल ऐक ही अर्थ विशेष है कि – "रागमई प्रकाशित सुगंधित आवाज़ विशेष" । इसके आलावा सारे अर्थ केवल मनमत हैं - गुरूमत का इससे कोई संबंध विशेष नंही हैं ।

"सबद गुरू - सुरत धुन चेला । गुण गोबिंद - नाम धुन बाणी ।"